राजस्थानी लोक साहित्य में नारी जीवन की समस्याएँ

प्रीती पारीक
शोधार्थी
डॉ. पिंकी पारीक
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग वनस्थली विद्यापीठ

सारांश
सांसारिक प्रक्रिया में जितना महत्व पुरूष का है, उतना ही, स्त्री का भी है। प्राचीन काल से ही नारी का सम्मान भारतीय सांस्कृतिक परम्परा का हिस्सा रहा है। नारी को नारायणी माना गया है। उसे गृहलक्ष्मी तथा जननी जैसे शब्दों से नवाजा गया है किंतु प्राचीन काल में नारी को जो सम्मान तथा स्थान प्राप्त था, वह वर्तमान में छिन्न-भिन्न सा प्रतीत होता है। नारी जीवन की अनेक समस्याएँ रही है। लोकसाहित्य में नारी के अनेक रूप उकेरे गये है - उसे कन्या, पतिव्रता, विवाहिता, दासी, वेश्या, देवदासी, कुल्टा, कामणगारी, छिनाल, सती, साध्वी आदि अनेक नाम दिये गये हैं।

बीज शब्द - गृहलक्ष्मी, पतिव्रता, कामणगारी, छिनाल, सती, साध्वी, नारायणी।

नारी जीवन की समस्याएँ उसके जन्म के साथ ही प्रारम्भ हो जाती है क्योंकि जहाँ पुत्र जन्म पर खुशी तथा उल्लास का वातावरण होता है वहीं आज भी कन्या के जन्म पर उदासी तथा मातम का वातावरण होता है। कन्या के जन्म लेते ही परिवार को उसके विवाह तथा दहेज की चिंता सताने लगती है।

राजस्थानी लोक साहित्य के अध्ययन से हमें नारी जीवन की विभिन्न समस्याओं की जानकारी मिलती जिनमें बाल विवाह, पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा, विधवा नारी की समस्या, बेमेल विवाह, बहु विवाह आदि प्रमुख है।राजस्थानी लोक साहित्य में विभिन्न कथाओं, गाथाओं तथा गीतों के माध्यम से बाल-विवाह जैसी कुप्रथाओं का ज्ञान होता है। बाल विवाह नारी जीवन की एक प्रमुख समस्या रही है। एक बालिका जिसकी खेलने -कूदने की उम्र में ही शादी कर दी जाती है जिसे बचपन में ही घर-गृहस्थी जैसी जिम्मेदारियाँ लाद दी जाती है। गुड्डे-गुडियों से खेलने की उम्र में उसे विवाह के बंधन में बाँध कर माता-पिता अपनी जिम्मेदारियों से मुक्त होना चाहते हैं। बाल-विवाह नारी जीवन की एक समस्या ही नहीं है अपितु सम्पूर्ण समाज के लिए एक बुराई है।

खेलने-कूदने की उम्र में घर-गृहस्थी की जिम्मेदारी उठानी होती है। बाल विवाह के दुष्प्रभाव यह होता है कि कम उम्र में ही माँ बन जाती है, जिससे उसको शारीरिक दर्बलता का भी सामना करना पड़ता है।

बाल विवाह के दुष्परिणामों की चर्चा करते हुए स्वामी दयानन्द सरस्वती ने कहाँ था- ''बाल्यावस्था में विवाह से जितनी हानि पुरुष की होती है, उससे अधिक स्त्री की होती है। जैसे- कच्ची फसल को काट लेने से अन्न नष्ट हो जाता है, कच्चे फल और ईख में मिठास नहीं होती, ठीक उस तरह छोटी आयु में जो अपनी संतानों का विवाह कर देते हैं, उनका वंश बिगड़ जाता है।''

बाल विवाह, जिसमें अधिकांशतः लड़कियाँ शामिल हैं, सदियों से सामाजिक नियंत्रण के एक स्वीकृत रूप में यह प्रथा प्रचलित है। बाल-विवाह पर अनेक गीत राजस्थानी लोक साहित्य में मिलते हैं। 'बाबुल' नामक गीत में एक छोटी बालिका अपने पिता से कहती है कि इतनी छोटी उम्र में आपने मेरी शादी कर दी इसमें मेरा क्या कसूर था। यह गीत बालमन की पीड़ा को उजागर करता है।

''बाबुल म्हैं तो नादान थी, क्यां जाणा संसार।
गुड्डे-गुड़िया खेलत-खेलत, बाँध दियो सासर द्वार।
पीहर म्हें तो सुख सपना सासर लागै भार।
आखां भर-भर रोवूँ मैं, छूठ गयो घर द्वार।''

वर्तमान समय में आधुनिकतावादी युग में शिक्षा के प्रसार के बावजूद आज भी बाल विवाह एक महामारी जैसी समस्या बना हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप दुनिया भर में लड़कियों के शारीरिक, यौन व भावनात्मक शोषण के रूप में विनाशकारी परिणाम सामने आते हैं। यद्यपि वर्तमान समय में बाल-विवाह में कमी आई है। किंतु ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी बड़ी संख्या में बाल विवाह हो रहे हैं। जो समाज के लिए एक चिंता का विषय है। ''राजस्थानी लोक साहित्य में स्त्रियों के विवाह के प्रति उनकी भूमिका और उनके अधिकारों पर भी गहराई से विचार किया गया है। बहुत सी कहानियों में यह दिखाया गया है कि स्त्रियों को परिवार की परम्परागत प्रथाओं और नियमों के अनुसार विवाह करना पड़ता है, जिससे उनकी स्वतन्त्रता पर प्रतिबंध लग सकता है।''

राजस्थानी लोक साहित्य में नारी जीवन की समस्याओं में पर्दा प्रथा एक प्रमुख समस्या है। राजस्थानी समाज में पर्दा प्रथा एक कुप्रथा के रूप में विद्यमान है। हिन्दू समाज में पर्दा प्रथा मुस्लिम समाज से आई। मुस्लिम आक्रान्ताओं से अपनी बहु-बेटियों की रक्षा करने के लिए हिन्दुओं ने इस कुप्रथा को अपनाया। राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में पर्दा प्रथा को एक आवश्यक परम्परा के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। शहरी क्षेत्रों मे ंशिक्षा के विकास के कारण इसमें कमी आई है किंतु गाँवों में आज भी इस प्रथा का पालन शिद्धत से महिलाओं द्वारा किया जाता है। घूँघट को नारी की मर्यादा का प्रतीक माना गया है। उसे समाज के सभी पुरूषों से पर्दा रखना होता है। लोक साहित्य में स्त्री को पुरूषों के साथ-साथ स्त्रीयों से भी पर्दा करने का उल्लेख मिलता है घूघंट को नारी का आभूषण माना गया है। उसे अपने ससुर, जेठ तथा सास और बुजुर्गों से पर्दा करना होता है। राजपूत समाज में तो पर्दा प्रथा अत्यन्त कठोर थी। स्त्री को सदैव पर्दे में रखा जाता था। राजमहलों एवं ठाकुरों की हवेलियों में स्त्रियों के लिए अलग से 'जनानी ड्योढी' होती थी। जहाँ पर पुरुष का जाना निषेध कर किया गया था। राजमहलों अथवा हवेलियों में यदि किसी उत्सव का आयोजन होता तो वह जालीदार झरोखो से उस आयोजन को देखती थी।''

राजस्थान में घूघंट प्रथा तथा अन्य राज्यों की तुलना में अधिक प्रचलित हैं किंतु यह प्रथा आज के समय में प्रासंगिक नहीं हे। फिर भी ग्रामीण अंचल में पढ़े-लिखे लोगों द्वारा आज भी पर्दा प्रथा का पालन किया जा रहा है। इस प्रकार पर्दा प्रथा आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्रियों के लिए एक समस्या है।बहु विवाह नारी जीवन की एक प्रमुख समस्या रही है भारतीय समाज में यह प्रथा प्राचीन काल से ही विद्यमान रही है। राम कृष्ण के युग में भी हमें बहुविवाह का प्रचलन देखने को मिलता है। महाराज दशरथ के तीन रानियों का उल्लेख मिलता है। राजस्थानी लोक

साहित्य में बहु विवाह के अनेक उदाहरण है - राजा भर्तहरि की कथा, ढोला मारू की गाथा, राजा रतनसिंह की कथा आदि में बहुविवाह प्रथा का प्रचलन मिलता है।बहु विवाह एक नारी के लिए अत्यंत पीड़ादायी रही है, कोई भी नारी अपने पति के प्रेम का बँटवारा नहीं चाहती है। सौत की कल्पना भी दुखदायी रही है। कौन सौत का होना चाहेगी? सौत तो स्वप्न में दिखाई गई भी बुरी लगती है। कहा भी है ''सौक बुरी काचा चून की'' प्रत्येक पत्नी पति का पूर्ण प्रेम चाहती है। सौत के प्रति लोकगीतों में नारी ने अपने हृदय के सच्चे भावों को व्यक्त किया है। प्रस्तुत गीत में स्त्री सौत के प्रति भावना को व्यक्त कर रही है।

"नित उठ देखूं पीयर सासरो,
नित उठ देखू मोसाल।
नित उठ निरखूं मोजी सायबो,
नजर्यां नी देखूं लौड़ी सौक।।''

हालाँकि वर्तमान आधुनिकता वादी युग में बहु विवाह के उदाहरण बहुत कम देखने को मिलते हैं। बहु विवाह नारी जीवन की एक प्रमुख समस्या रही है। दहेज एक ऐसी सामाजिक बुराई है जिसके कारण समाज में महिलाओं के प्रति अकल्पनीय यातनाएँ, अत्याचार, और अपराध उत्पन्न हुए हैं, जिसके फलस्वरूप पवित्र भारतीय विवाह व्यवस्था दूषित हुई है। आज के आधुनिक परिवेश में भी दहेज प्रथा ने अपने पाँव पसार रखे हैं। दहेज प्रथा के कारण आज देश में औसतन हर घंटे एक महिला मौत का शिकार होती है। इस प्रथा ने वर्तमान समय में महामारी का रूप ले लिया है। जिसके कारण न जाने कितनी ही बेटियों को शारीरिक तथा मानसिक यातनाएँ झेलनी पड़ती है। आये दिन समाचार पत्रों में दहेज प्रथा के कारण प्रताड़ित बेटियों की मृत्यु की खबर छपती है। यह प्रथा आज भी उतनी भयंकर और निर्मम है, जितनी की मध्यकाल में थी। लड़की के माता-पिता तो महाजनों के ऋण और भारी ब्याज के बोझ के तले बर्बाद हो जाते हैं। महाजनों का कर्ज उतारने के लिए उन्हें अपनी सम्पत्ति तक बेचनी पड़ती है।''

वास्तव में दहेज प्रथा एक लड़की के लिए अभिशाप हेती है। जिसके कारण उसे अनेक कष्ट व यातनाएँ सहनी पड़ती है। प्रस्तुत लोक गीत की पंक्तियों में एक बेटी दहेज प्रथा की पीड़ा को निम्न प्रकार से व्यक्त कर रही है-

"एक दुखड़ो जी म्हारा बाप को
म्हाने बूढ़ा ने परणाई रे डाबड़ा''

इस प्रकार दहेज प्रथा नारी के जीवन की एक प्रमुख समस्या है कि जो आज भी भारतीय समाज में प्रचलित है। जिसके कारण न जाने कितनी ही योग्य बेटियाँ अयोग्य वर के साथ ब्याह दी जाती है।

भारतीय समाज में विधवा स्त्री का जीवन बड़ा ही कठिनाईपूर्ण रहा है। विधवा स्त्री का मुख देखना भी अपशगुन माना जाता था। किसी शुभ कार्य पर जाते समय यदि विधवा स्त्री दिख जाये तो उसे भी बुरा माना जाता है किंतु विधुर पुरूष पर यह सब बातें लागू नहीं होती है।

"नारी जीवन की प्रमुख समस्याओं में वैधव्य एक प्रमुख समस्या है। भारत देश अपनी परम्पराओं और संस्कृति के लिए जाना जाता है लेकिन कुछ परम्पराएँ ऐसी है, जो समाज की प्रगति में बाधक है। भारतीय समाज की यह विडम्बना है कि पुरूष चाहे कितने ही विवाह कर सकता है किंतु स्त्री के लिए दूसरा विवाह अनैतिक माना जाता है।''

राजस्थानी लोक साहित्य में विधवा स्त्री को कुल्टा, डायन तथा अपशगुनी जैसे शब्दां से पुकारा जाता है। विधवा स्त्री पर अनेक बन्धन लगा दिये जाते है। उसके रंगीन वस्त्र धारण करने, श्रृंगार करने बाहर निकलने तथा उसके हँसने तक पर भी पाबंदी लगा दी जाती है। यह हमारे समाज की दोहरी मानसिकता ही है कि जहाँ एक विधवा स्त्री के लिए इतने सारे बंधन होते वहीं एक विधुर पुरूष को इन सब बंधनों से आजाद रखा जाता है। उनके लिए किसी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं होता है। इस कारण विधवा स्त्री का जीवन बड़ा ही यातनापूर्ण होता है। सन्तानहीनता नारी जीवन की एक प्रमुख समस्या रही है। सन्तानोत्पत्ति के लिए पुरूष तथा स्त्री दोनों की समान भूमिका होती है किन्तु रूढ़िवादी समाज इसके लिए केवल स्त्री को जिम्मेदार ठहराता है। जिस स्त्री के सन्तान नहीं होती है उसे हेय दृष्टि से देखा जाता है, उसके लिए बांझ जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। कई घरों में तो परिवार के लोगों द्वारा प्रातः काल सन्तानहीन नारी का मुख भी नहीं देखा जाता है। एक नारी के लिए ये कितनी दुःख की बात है कि उसका पति तथा सास उसे ताने देते है। समाज तथा परिवार में सन्तानहीन नारी को अनेक व्यंग्य तथा तानों का सामना करना पड़ता है। राजस्थानी लोकगीतों में सन्तानहीन नारी की मनोदशा का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया गया है -

"सासू तो कैवे म्हारी बहूवड़ बाझँड़ी,
परणियौ लावै ल्योड़ी सौक।
कासी रा बासी अमर बधादौ नी जग म पालणौ
देराणी जेठाणी बोले अबला बोल।''

इस प्रकार सन्तानहीनता नारी के लिए एक प्रमुख समस्या है। सन्तानहीनता के साथ-साथ पुत्र विहीना स्त्री की भी परिवार तथा समाज में दयनीय स्थिति रही है।

निष्कर्ष -

इस प्रकार नारी जीवन की समस्याएँ उसके जन्म के साथ ही प्रारम्भ हो जाती है क्योंकि जहाँ पुत्र जन्म पर खुशी तथा उल्लास का वातावरण होता है वहीं आज भी कन्या के जन्म पर उदासी तथा मातम का वातावरण होता है। कन्या के जन्म लेते ही परिवार को उसके विवाह तथा दहेज की चिंता सताने लगती है।

संदर्भ

1. डॉ. प्रकाश व्यास, राजस्थान का सामाजिक इतिहास, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ.सं.-135
2. डॉ. नारायण सिंह भाटी, राजस्थानी लोक संस्कृति, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृ.सं.-142
3. डॉ. प्रकाश व्यास, राजस्थान का सामाजिक इतिहास, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ.सं.-137
4. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, देवी लाल सामर, लोक कला निबंधावली भाग-3, भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर, 1957, पृ.सं.-152
5. डी.आर. आहूजा, राजस्थान लोक, संस्कृति और साहित्य, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, बसंत कुंज नई दिल्ली, 2014, पृ.सं.-59
6. जगमलसिंह : राजस्थानी एवं गुजराती लोक गीतों का तुलनात्मक अध्ययन, पंकज पब्लिकेशन, गढमुक्तेश्वर, पृ.सं.-30
7. गार्गी चौधरी, विजयदान देथा : लोक एवं संस्कृति, नवजीवन पब्लिकेशन जयपुर, प्रथम संस्करण, पृ.सं.-83
8. सोहनदास चारण, राजस्थानी लोक साहित्य का सैद्धान्तिक विवेचन, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, द्वितीय संस्करण 2016, पृ.सं.-32